आज नहीं पढ़ूँगा

कृष्ण कुमार

उस दिन मेरी बड़ी दीदी की शादी थी। घर के सब लोग तैयारियों में लगे थे। सबसे ज़्यादा काम रसोई में हो रहा था। वहाँ एक की जगह आज चार चूल्हे जल रहे थे। चार चूल्हे भी शायद कम थे, इसलिए दो बड़े-बड़े चूल्हे रसोई के बाहर आँगन में एक छपरी डालकर बनाए गए थे। सारे चूल्हों पर बड़े-बड़े कड़ाहे रखे थे। ये कड़ाहे इतने बड़े थे कि अगर मैं गलती से किसी में फिसल जाता तो किसी को मेरा पता भी न चलता।

हमारे घर के सामने रंगबिरंगा शामियाना लगा था। दीप चाचा अभी तक किसी बल्ली की ठोका-पीटी कर रहे थे। पड़ोस की दो छोटी लड़कियों को झण्डियाँ बनाने का काम मिला था और उनके भाई बैठे-बैठे गुब्बारे फुला रहे थे।

गर्मी इतनी थी कि कुछ पूछो मत, लेकिन काम में लगे रहने के कारण लोगों को महसूस नहीं हो रही थी। और कोई दिन होता तो इस वक्त लोग पंखे के नीचे फर्श पर पड़े सो रहे होते; पर आज तो पसीने से भीगे-भीगे ही काम में जुटे थे।

ऐसे में मेरी हालत सबसे बुरी थी क्योंकि एक हफ्ते बाद मेरी परीक्षा शुरू होने वाली थी। अम्मा और पिताजी ने बहुत कोशिश की थी कि दीदी की शादी मेरी परीक्षा के बाद हो; लेकिन उनकी कोशिश बेकार गई

क्योंकि पण्डितजी ने उनकी एक न सुनी। तारीख उन्हीं ने तय की थी। इतने बड़े पण्डितजी एक छोटे लड़के की चिन्ता भला क्यों करने लगे!

मैं पढ़ाई में बहुत कमज़ोर न था, पर गणित से कुछ घबराता था। औसत के सवाल देखते ही मेरे छक्के छूट जाते थे। पिताजी को हमेशा मेरी गणित की चिन्ता रहती थी। इसलिए परीक्षा के महीना-भर पहले से उन्होंने एक मास्टर मेरे लिए लगा दिया था।

मास्टर साहब रोज़ चार बजे आते थे। वे कुछ साँवले रंग के थे और चश्मा पहनते थे। उनकी नाक कुछ-कुछ मूँगफली की तरह थी। होंठों को वे सिर्फ बोलते वक्त खोलते थे। बाकी समय अक्सर बन्द किए रहते थे, मानो अगर खोलेंगे तो कुछ गिर जाएगा !

वे एक लम्बा कुर्ता और ढीलाढाला पाजामा पहनते थे । पैरों में रबड़ की चप्पलें रहती थीं, जो शायद कभी हरी होंगी, पर अब तो कुछ भूरी-सी थीं। उनके बाल मेरी तरह माथे पर नहीं झूलते थे, बल्कि पीछे की तरफ लेटे रहते थे।

जितने आज्ञाकारी उनके बाल थे, वे चाहते थे कि मैं भी उतना आज्ञाकारी बनूँ। लेकिन मेरी समझ में नहीं आता था कि गणित सीखने और मास्टर साहब की आज्ञा मानने में क्या सम्बन्ध है! फिर मैं इतना गधा लड़का तो था नहीं कि उनके पीछे-पीछे घूमता रहूँ। यह ठीक है कि गणित मुझे अच्छी तरह नहीं आती थी, लेकिन इसका मतलब यह तो नहीं था कि मैंने साल भर मटरगश्ती की थी। सच तो यह है कि मैंने हिन्दी की इतनी किताबें पढ़ डाली थीं जितनी स्कूल में किसी ने नहीं पढ़ी होंगी। विज्ञान-मेले में एक-दो नहीं, पूरी पाँच दूरबीनें मैंने बनाई थीं। इसके अलावा तस्वीरें चिपकाकर कक्षा को सजाने का काम भी मैंने ही किया था।

लेकिन शायद इस सबकी परवाह लोग तब करते हैं जब किसी को गणित आती हो; बल्कि मैं तो यह सोचता हूँ कि अगर कोई पन्द्रह घोड़ों की औसत रफ्तार हिसाब लगाकर निकाल सकता हो तो उसे एक बहुत बड़ा विद्वान मान लिया जाएगा, चाहे विज्ञान और हिन्दी में वह घोड़ा क्या, गधा ही हो।

खैर, घोड़ों की रफ्तार निकालने और विद्वान बनने में जो भी सम्बन्ध हो, मास्टर साहब ने कमर कसकर मुझसे सवाल लगवाने शुरू कर दिए। उनके पास बैठकर मुझे दो-दो घण्टे लगातार सवाल हल करने पड़ते थे। कभी-कभी वे पाँच-छः सवाल देकर कुछ देर के लिए ऊँघने लगते तो मैं उनकी नाक देखकर सोचता कि इसे मूँगफली की तरह दबा दूँ तो कितना मज़ा आए! पर यह सिर्फ सोचने की बात थी। करने तो मुझे सवाल ही थे। ज़्यादा-से-ज़्यादा मैं यह कर सकता था कि जब वे ऊँघ

रहे हों तो कूदकर बाहर निकल जाऊँ और दो-तीन मिनट घूमकर या कुछ खाकर वापस आ जाऊँ।

जिस दिन बड़ी दीदी की शादी थी, उस दिन मैं किसी हालत में गणित नहीं पढ़ना चाहता था। मैं लगातार पिछले तीन दिनों से मास्टर साहब से कह रहा था कि मैं शादी वाले दिन नहीं पढ़ूँगा, इसलिए वे न आएँ; पर उन्होंने मेरी एक न सुनी। एक दिन पहले मैंने पिताजी से भी कहा कि वे मास्टर साहब को मना कर दें, पर वे भी राज़ी न हुए और बोले, "चलो, कल एक घण्टा पढ़ लेना।"

लेकिन मैंने तय कर रखा था कि चाहे कुछ भी क्यों न करना पड़े, आज नहीं पढ़ूँगा। सब लोग इतने मज़ेदार काम कर रहे हों तो मैं ही क्यों वे सूखे-सड़े सवाल करने में अपना सिर खपाता रहूँ? इतनी गर्मी में कॉपी से चिपका बैठा रहूँ? यह तमाशा नहीं तो क्या होगा कि जब बड़ी दीदी जाने की तैयारी कर रही हों, मैं कमर झुकाए चक्रवृद्धि ब्याज निकालता रहूँ? नहीं, आज मास्टर साहब को वापस भेजना होगा। मैंने अपना इरादा पक्का कर लिया।

तीन बजे मैंने अपनी कार्यवाही शुरू कर दी। सबसे पहले मैं दीप

चाचा के पास गया। मैंने अपना इरादा बताया और कहा कि जब मास्टर साहब आएँ तो वे मुझे उनसे किसी तरह बचाने की कोशिश करें।

दीप चाचा बिजली वाले की मदद कर रहे थे। वे थके हुए भी थे, इसलिए ज़्यादा नहीं बोले। बस, इतना कहा, "आने तो दो उन्हें।"

फिर मैं गुड्डी चाची के पास गया। वे बर्तन पोंछ-पोंछकर जमा कर रही थीं। उनसे भी मैंने वही बात कही और उन्होंने तुरन्त 'हाँ' कर दी। फिर मैं सुनील मामा के पास गया। वहीं मामी भी मिल गईं। सबसे आखिर में मैं रेखा के पास गया। रेखा मेरी पक्की दोस्त थी, इसलिए उससे मैंने साफ-साफ कह दिया कि जब मास्टर साहब आएँ, वह उनसे कह दे कि मैं आलू खरीदने बाज़ार गया हूँ।

इस तरह जब तैयारी पूरी हो गई तो मेरे सामने यह सवाल आया कि अब मैं जाऊँ कहाँ। कहीं छिपने की गुंजाइश नहीं थी। एक तो मैंने करीब-करीब सभी से कह दिया था कि मैं मास्टर साहब से बचने की कोशिश कर रहा हूँ। यह कहकर इन्हीं लोगों के सामने छिपना कुछ अजीब-सा दिखता। दूसरी बात यह थी कि अगर मैं छिपना चाहता भी तो आज के दिन सारे घर में ऐसी जगह कहाँ थी जहाँ मैं छिप सकता? हर जगह कोई-न-कोई काम हो रहा था और लोग बैठे हुए थे।

मैं इस उलझन से निकलने का रास्ता ढूँढ़ ही रहा था कि अचानक बाहर वाले कमरे की खिड़की से मुझे मास्टर साहब की शक्ल दिखाई दी। मुझे लगा कि मेरे सारे मन्सूबे धरे रह जाएँगे, अगर मैंने तुरन्त कोई कदम न उठाया। लेकिन मैं करूँ क्या, यह मेरी समझ में नहीं आ रहा था।

मैंने चारों तरफ नज़र दौड़ाई। मेरे सामने आँगन में अमरूद के पेड़ के नीचे पड़ी चारपाई पर कई लोग बैठे उबले आलू छील रहे थे। चारपाई के सामने एक बड़ा भारी पतीला रखा था जिसमें छिले हुए आलू डाले जा रहे थे। मैंने देखा कि पतीला इतना बड़ा था कि उसके पीछे और चारपाई के नीचे आसानी-से छिपा जा सकता था। पतीले के अलावा मुझे लोगों की टाँगों की आड़ का भी फायदा था। उनकी वजह से चारपाई के नीचे कुछ भी देख सकना असम्भव था।

यह जगह अच्छी है या नहीं, यह सोचने का वक्त ही नहीं था। मैं चारपाई के पास पहुँचा। बीचों-बीच गुड्डी चाची बैठी थीं और उनसे मैं पहले ही कह चुका था कि मैं क्या करने वाला हूँ! मुझे खड़ा देखकर उन्होंने सिर्फ इतना पूछा कि क्या मास्टर साहब आ गए हैं। मैंने मुँह से एक शब्द निकाले बिना ऊपर-नीचे सिर हिला दिया और चारपाई के नीचे घुस गया।

मेरा चारपाई के नीचे घुसना था कि मास्टर साहब घर में घुसे। जैसी कि उनकी आदत थी, वे सीधे अन्दर

चले गए। सबसे पहले उनकी निगाह दीप चाचा पर पड़ी। दीप चाचा थकान से चूर होकर बाहर वाले कमरे की आराम कुर्सी पर सुस्ता रहे थे। मास्टर साहब ने उनसे मेरे बारे में पूछा तो वे बोले, "वह अन्दर गया है। शायद गुड्डी के पास कोई काम कर रहा है।"

यह सुनकर मास्टर साहब कमरे से बाहर निकलकर बरामदे में दाखिल हुए।

बरामदे के सामने ही वह आँगन था जिसमें लगे अमरूद के पेड़ के नीचे चारपाई पर आलू छीले जा रहे थे और नीचे मैं छिपा था। मास्टर साहब सीधे गुड्डी चाची के सामने पहुँचे। जैसे ही उन्होंने मेरे बारे में पूछा, वे तपाक-से बोलीं, "अभी तो यहीं था। अपने चाचा के पास तो नहीं बैठा है?"

"नहीं, मैं उन्हीं के पास से आ रहा हूँ। उन्होंने बताया कि वह आपके पास कोई काम कर रहा है।" मास्टर साहब ने परेशान होते हुए कहा।

"नहीं, यहाँ कहाँ है? वह शायद उधर न गया हो!" यह कहते हुए गुड्डी चाची ने आँगन के पिछवाड़े की तरफ इशारा किया।

इस पर भी मास्टर साहब को सन्तोष नहीं हुआ। वे बोले, "क्या इस आँगन के पीछे भी कोई आँगन है?"

उनका यह भोला-भाला सवाल सुनकर चारपाई पर बैठे सब लोग खिलखिलाकर हँसने लगे। मैं अभागा बड़ी कठिनाई से अपनी हँसी दबाए, चारपाई के नीचे पीठ टेढ़ी किए बैठा रहा। मुझे हँसी तो आ रही थी लेकिन साथ-साथ घबराहट भी महसूस हो रही थी कि कहीं अचानक पोल न खुल जाए!

मास्टर साहब को जवाब रेखा ने दिया जो कुछ ही देर पहले आलू छीलने के काम में शामिल हुई थी। मैंने उससे कहा था कि वह मेरे बाज़ार जाने का बहाना लगा दे, पर वह बोली, "आज उसका पेट खराब है। आप बैठिए, वह थोड़ी देर में आ जाएगा। लेकिन वह पढ़ नहीं पाएगा, क्योंकि उसे फिर जाना पड़ेगा।"

यह सुनकर मेरा पेट सचमुच फटने लगा – हँसी के मारे; लेकिन मास्टर साहब ने इस बात को बिलकुल सच माना। उन्होंने कहा, "अच्छा, मैं बाहर दीप के पास बैठता हूँ। जब आ जाए तो मेरे पास भेज देना।"

वे जैसे ही मुड़े, मैं चारपाई के नीचे से निकल आया। गुड्डी चाची मुँह पर उँगली रखे अपनी हँसी रोकने के लिए इशारा कर रही थीं; पर जैसे ही मास्टर साहब बरामदा पार करके बाहर वाले कमरे में जाते दिखे और इधर मैं सामने आ खड़ा हुआ, तो सब लोग खिलखिलाकर हँस पड़े। मैं स्वयं इस हँसी में शामिल हुआ। तभी रेखा कूदकर मेरे सामने आई और बोली, "बचाने का इनाम लाओ जल्दी-से, वरना गर्म-गर्म आलू मुँह में ठूँस दूँगी।"

सबने देखा, उसके हाथ में सचमुच एक ताज़ा छिला हुआ आलू था। पर मैं डरा नहीं। मैंने कहा, "लाओ, ठूँसो!" और अपना मुँह बा दिया।

इधर उबला आलू मेरे मुँह में गया, उधर मेरी आँखों में आँसू आ गए। मैंने तुरन्त आलू बाहर निकाला, हथेलियों से दबाकर ठण्डा किया और फिर खा गया। उसे गले से नीचे धकेलकर मैंने रेखा से कहा, "बोल, तुझे क्या दूँ?" मुझे इनाम वाली बात याद थी।

रेखा एक आलू का छिलका अलग करते हुए बोली, "मुझे...मुझे...मुझे... मुझे...बताऊँ? मुझे एक रसगुल्ला चाहिए!"

"बस, इतनी-सी चीज़! अभी लाता हूँ।" मैंने कहा। मुझे मालूम था कि रसगुल्ले एक बहुत बड़े कड़ाहे में रसोई के साथ वाले कमरे में रखे हैं।

मैं फुर्ती-से मुड़ा और कूदते-फाँदते रसोई में घुस गया। रसोई में बर्तनों का जंगल लगा था। उसे पार करके जैसे ही कमरे में पहुँचा तो देखा, पिताजी और अम्मा मिठाइयों का मुआयना कर रहे थे। मुझ पर नज़र पड़ते ही पिताजी चिल्ला पड़े, "तू

यहाँ क्या कर रहा है? तेरे मास्टर साहब कितनी देर से इन्तज़ार कर रहे हैं!"

मैं हक्का-बक्का रह गया। एक नज़र मैंने अम्मा की ओर डाली, फिर जो सूझा, मैंने कह दिया, "मैं मास्टर साहब के लिए कुछ मिठाई लेने आया था।"

मेरे इस झूठ का पिताजी पर बहुत असर पड़ा। वे बोले, "अच्छा, अच्छा, यह बात है! पर तू प्लेट तो लाया ही नहीं, मिठाई ले कैसे जाएगा?"

केवल इतना कहकर कि 'ओह, प्लेट लाना तो मैं भूल ही गया! अभी लाता हूँ!' – मैं फुर्ती-से वापस रसोई में दाखिल हुआ। प्लेट लेकर वापस आया और रसगुल्ला, बरफी, दालमोठ वगैरह इकट्ठे करने लगा। पिताजी और अम्मा अब भी वहीं पर थे; पर मुझे उनसे कुछ नहीं कहना था और न ही उन्होंने मुझसे कुछ कहा। मिठाई लेकर मैं सीधे बाहर गया जहाँ मास्टर साहब एक कुर्सी पर बैठे दीप चाचा से बातें कर रहे थे। मैं पास पहुँचा तो दोनों चौंक गए। दीप चाचा यह सोचकर चौंके कि मैं निकल क्यों आया और मास्टर साहब यह सोचकर कि मैं अब तक कहाँ था। दीप चाचा मेरी ओर देखकर मुस्कराते हुए बोले, "आज तुम्हारी जगह मैं पढ़ रहा था।"

मास्टर साहब ने पूछा, "तुम्हारा पेट कैसा है?"

मैंने कुछ नहीं छिपाया, "मास्टर साहब, मेरा पेट बिलकुल ठीक है लेकिन गणित आज मुझे नहीं पढ़नी थी। आपके लिए मिठाई लाया हूँ।"

प्लेट उनके सामने रखकर मैं मुड़ा और अन्दर भागा, क्योंकि रेखा का रसगुल्ला अभी मुझ पर चढ़ा था।

कृष्ण कुमार: प्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं लेखक। शिक्षा के मुद्दों पर सतत चिन्तन एवं लेखन। दिल्ली विश्वविद्यालय में शिक्षा के प्रोफेसर और एन.सी.ई.आर.टी. के निदेशक रह चुके हैं। भारत और पाकिस्तान में शिक्षा पर उनकी दो पुस्तकें, *मेरा देश तुम्हारा देश* और *शान्ति का समर* चर्चित रही हैं। उनकी हाल की पुस्तकों में *शिक्षा और ज्ञान, चूड़ी बाज़ार में लड़की* और बच्चों के लिए *पूड़ियों की गठरी* शामिल हैं।

सभी चित्र: हरमन: चित्रकार हैं। दिल्ली कॉलेज ऑफ आर्ट, नई दिल्ली से फाइन आर्ट्स (चित्रकारी) में स्नातक और अम्बेडकर यूनिवर्सिटी, नई दिल्ली से विज़ुअल आर्ट्स में स्नातकोत्तर। भटिंडा, पंजाब में रहती हैं।